International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 10-08-2022, Accepted: 26-08-2022, Published: 12-09-2022
Volume 8, Issue 5, 2022, Page No. 1-3

अमृतलाल नागर के साहित्य में युग चेतना

ज्ञानी देवी गुप्ता
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, गुरु काशी विश्वविद्यालय, तलवंडी साबो बठिण्डा, पंजाब, भारत

सारांश
युगचेतना को शब्दों के चौखटे में जड़कर प्रेमचंद ने भी प्रस्तुत किया था, किन्तु नागर ने उस चौखटे के आस–पास एक ऐसी दुनियां की छवि भी उभारी है जो रंगीन भी है, कटु भी है, सीधी और सरल भी है तो यथार्थ भी है। उसमें गाँव दमकते हैं, शहर चहकते हैं, तो भोली–भाली जिन्दगियों की मासूमियत भी है और उन जिन्दगियों का गुनाह की वेदी पर चढ़ाकर आभिजात्य लादे रहने वाले पौरुषहीन व्यक्ति भी हैं। अमृतलाल नागर एक प्रतिभाशाली और प्रबुद्ध सर्जक हैं। अतः उनकी कृतियों में करवट बदलते और सिसकते भारत के समाज, इतिहास और संस्कृति की तस्वीरें उजागर होती चली गई हैं। कथ्य की सजगता, शिल्प की नवीनता और अनुभव की प्रौढ़ता ने उन्हें जीवन के बारीक से बारीक रेशों को पकड़ने की गहरी अन्तर्दृष्टि दी है। निश्चय ही लेखक का अनुभव सिद्ध मानस अब तक के साहित्य की जाँच करता रहा है और टटोलता रहा है अपने सामाजिक साहित्यकारों की गतिविधियों को।

मूल शब्दः युगचेतना, प्रबुद्ध सर्जक, यथार्थवादी, पाश्चात्य प्रभाव, निस्संगता

प्रस्तावना

नागर जी ने ऐसी दृष्टि दर्शना प्रस्तुत की जिसके तहत जिन्दगी के सभी रोयें–रेशे उजागर हो गये। हाँ कहीं कहीं अतिरिक्त बौद्धिकता का पलड़ा कुछ दाहिनी ओर झुक गया है। यह झुकाव श्रेयस भले न हो, प्रेयस अवश्य है।'[1] स्वतंत्रता के साथ ही साथ आधुनिक चेतना का एक नया दौर हिन्दी के साहित्य में दिखाई देने लगा। पारम्परिक मूल्यों का विघटन, पुरानी मान्यताओं की अस्वीकृति और व्यक्ति के अन्तर और बाह्य का सामंजस्य तथा भारतीय संस्कृति विचारधारा पर पाश्चात्य प्रभाव की जागृति ने साहित्यकारों को कहीं अधिक सचेतन किया है। साथ ही मनोमंथन द्वारा खुद को टटोलने की चाह भी बढ़ी है। 'नागर जी के उपन्यास लेखन में प्रवृत होने से पूर्व ही साहित्य में सामाजिक, वैयक्तिक मनोवैज्ञानिक मनोविश्लेषणात्मक प्रवृत्तियों को आकार दिया जाने लगा है। समाज के सजग व्यक्ति के रूप में नागर जी को आकार दिया जाने लगा है। समाज के सजग व्यक्ति के रूप में नागर जी को प्रत्येक प्रवृत्ति की हवा ने स्पर्श किया, किन्तु अपने में पूरी तरह डुबाया नहीं। अतः उनकी सामाजिक चेतना अलग से दिखलाई देती है।' [2]

आधुनिकता की मांग को व्यक्ति और समाज दोनों के पृथ्क अस्तित्व और समन्वित रूप में उन्होंने स्वीकार किया। पुराने मूल्यों पर प्रश्न चिन्ह लगाते हुए वे युग के साथ तेजी से चले हैं, किन्तु पथभ्रष्ट नहीं हुए हैं, दिग्भ्रमित कहीं नहीं हुए हैं। 'न तो उनके पात्र अश्क के पात्रों की भांति कुण्ठित और दमित वासनाओं के गुलाम हैं और न यशपाल के पात्रों की तरह पूर्ण रूपेण राजनीति से परिचालित, न प्रेमचंद की भांति गाँधीवादी आस्था से दबे हुए संघर्षशील, अपितु सहज तरीके से अपने समाज की कुरीतियों से जूझते हुए और मानवता के साथ पूर्ण सहानुभूति रखते हुए भी आधुनिक चेतना से परिपूर्ण, अपना मार्ग स्वयं बनाते हुए अपने ही जाने पहचाने पात्र हैं। वहाँ केवल सत् ही नहीं असत् भी है, समस्त आदर्शों के साथ विकृतियाँ भी हैं, किन्तु लेखक बड़ी धीर गति से एक–एक स्थिति को सोच समझकर शब्दों के वृत में रखता चला गया है।'[3] 'आधुनिक चेतना नागर जी को केवल आज के समाज को ही देखने को प्रेरित नहीं करती, अपितु वे उसका उत्स इतिहास और पुराण में भी खोजते हैं। ऐतिहासिक तथ्यों की जंजीरों में बंधे हुए पात्र, रहते तो अतीत में हैं, किन्तु कहीं उनकी धड़कन का तालमेल लेखक के युग की धड़कन से भी हो रहा है।' [4]

अमृतलाल नागर न केवल वर्तमान के चितेरे हैं, बल्कि इतिहास को समेटते हुए उनकी दृष्टि कवि सिरोमणि तुलसीदास के काव्य में घुली हुई उनके जीवन के नेपथ्य की अंतरंगता को भी औपन्यासिक शिल्प में ढाल सकी हैं। इसी क्रम में वे दक्षिण भारत के अतीत को भी साकार कर वर्तमान युग में ले आये हैं। नागर जी का पाठक अपनी संवेदना को परिशुद्ध आलोकित करता हुआ जिस कृति की राह से गुजरता है तो लगता है कि वह असाधारण किन्तु यथार्थ भूमि पर खड़ा है।

'महाकाल' को ही लिजिए, उसमें बंगाल के भीषण और हिला देने वाले अकाल के चित्र हैं। नागर जी ने इसे एक संवेदनशील रचनाकार के रूप में प्रस्तुत किया है, न कि इतिहासकार के रूप में। इसकी कथा के सहारे उपन्यासकार ने व्यक्ति के स्वार्थ को अपनी तीखी वाणी से और प्रहारक शब्दावली के द्वारा अभिव्यक्त किया है। इतना ही नहीं उपन्यास की कथा में जन सामान्य का दुःख–दर्द व दैन्य भी और जमींदारों व महाजनों के विलास का व्यंग्यात्मक शिल्प में किया गया अंकन भी है।' [5]

मानवतावाद की प्रतिष्ठा के कारण ही प्रेमचंद अपने पूर्ववर्ती उपन्यासकारों से बहुत आगे हैं। हिन्दी उपन्यास की यथार्थवादी धारा को पूर्ण परिपक्वता प्रेमचंद द्वारा ही प्राप्त हुयी और उनके समकालीन एवं पश्चातवर्ती साहित्यकारों पर प्रेमचंद द्वारा प्रवर्तित, निर्देशित परम्परा एवं जीवन दृष्टि का पर्याप्त प्रभाव पड़ा। तद्युगीन मानव चेतना और मानव पीड़ा को प्रेमचंद साहित्य ने मुखर बनाया है। कृषक जीवन एवं ग्राम्य जीवन के सजीव अंकन के साथ भारतीय मध्यवर्गीय जीवन की समस्याओं और जटिलताओं का सूक्ष्म निरीक्षण भी उनके साहित्य में मिलता है। प्रेमचंद के समवर्ती उपन्यासकार जयशंकर प्रसाद के काव्यात्मक अनुभूतियों के साथ उपन्यासों का प्रणयन किया। 'कंकाल' में स्त्रियों की विवशता और सामाजिक आडम्बरों पर प्रकाश डाला गया है और 'तितली' में सामन्ती विषमताओं और ग्राम्य जीवन के सभी पहलुओं का चित्रण ईमानी किन्तु, मरण शैली में किया गया है। 'इरावती' ऐतिहासिक भूमि पर लिखा गया अधूरा उपन्यास भले हो किन्तु उसकी पूर्णता के बीज उसके अधूरेपन से ही अंकुरित होते दिखाई देते हैं।' [6]

प्रेमचंद की यथार्थवादी धारा का निर्वाह सियारामशरण गुप्त, विश्वम्भरनाथ कौशिक, भगवती प्रसाद वाजपेयी, वृदांवनलाल वर्मा, चतुरसेन शास्त्री, आदि के सामाजिक उपन्यासों में करने का यत्न किया गया और सामाजिक कुरीतियों के कारणों को खोजा गया। इनके उपन्यासों में सामाजिक आलोचना का तीव्र रूप दिखाई देता है। प्रेमचन्द की बहिर्मुखी खुली सामाजिक दृष्टि के कारण भारतीय समाज का चित्र उपन्यासों में प्रस्तुत हुआ, किन्तु जीवन की आस्था को प्राप्त करने के साथ ही वैयक्तिकता उभरने लगी थी और व्यक्ति का अस्तित्व उसका साहस समाज की उन्नति और परिवर्तनों के लिए महत्वपूर्ण माना जाने लगा। अतः बौद्धिकता के आग्रह ने व्यक्तिवादी सामाजिक धारा को प्रश्रय दिया। प्रेमचंद के समाजगत हितों का महत्त्व अंकित किया, किन्तु आगे आने वाली पीढ़ी ने वैयक्तिक हितों को सामने रख कर सामाजिक प्रवृत्तियों का दिग्दर्शन किया। जैनेन्द्र का साहित्य इसी मनोविश्लेषणात्मक धरातल पर वैयक्तिक भूमिका का स्वतंत्र रूप प्रस्तुत करता है। अज्ञेय और इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास भी मनोवैज्ञानिक भावभूमि और परम्पराओं के प्रति विद्रोहात्मक स्वरों में बुने हुए हैं। उन्होंने स्त्री –पुरूषों के संबंधों को मुक्त स्वरूप प्रदान किया है।

जैनेन्द्र के 'सुखदा', 'सुनीता', 'व्यतीत', 'त्यागपत्र', 'कल्याणी' आदि इलाचन्द्र जोशी के 'संन्यासी', 'प्रेत', 'लज्जा'आदि एवं अज्ञेय के 'शेखर : एक जीवनी', 'नदी के द्वीप', 'अपने–अपने अजनबी' उपन्यास मनोवैज्ञानिक भूमि पर लिखे गये हैं। मनोवैज्ञानिक आँख से जीवन को नहीं देखा जा सकता है। उसे देखना हो तो समाज शास्त्रीय चश्में से ही देखा जा सकता है। कारण मनोवैज्ञानिक व्यक्ति केन्द्रित होता है जीवन निष्ट नहीं। 'अतः जो कलाकार समाज के चित्रक होते हैं वे सामाजिक मनोविज्ञान के धरातल पर खड़े होकर अपना काम करते हैं। ऐसे सर्जक प्रेमचन्दोत्तर पीढ़ी में भी मिलते हैं। समाज के यथार्थ को विश्लेषणात्मक दृष्टि से देखना, परिवर्तित संदर्भों को युगानुसार परखकर क्रान्तिकारी दृष्टिकोण का स्थापन यशपाल, अश्क, रेणु, नागार्जुन, भगवतीचरण वर्मा, भैरवप्रसाद गुप्त, उदयशंकर भट्ट, रांगेय राघव आदि उपन्यासकारों की रचनाओं में मिलता है। इन साहित्यकारों ने देश, काल और विषय की व्यापकता को समेटते हुए समाज के संघर्षमय यथार्थ को प्रस्तुत किया है।' [7]

इन उपन्यासकारों ने मध्यवर्गीय समाज की विवशताओं महत्वाकांक्षाओं, राजनीतिक चेतना और अंधपरम्पराओं के विघटन को स्वर दिये हैं। यशपाल के उपन्यासों में मार्क्सवादी दृष्टि और कम्युनिज्म विचारधारा के द्वारा सामाजिक क्रान्ति करने वाले पात्रों की सृजना के साथ, सेक्स का निर्द्वन्द्व चित्रण भी किया है। अश्क उपन्यासों में मध्यवर्गीय कुंठाओं का चित्रण सामाजिक धरातल पर किया गया है। रेणु और नागार्जुन ने स्वतंत्रता के बाद के भारत की ग्रामीण चेतना को पूर्ण आंचलिकता के साथ मुखरित किया है। रेणु का 'मैला आंचल' और नागार्जुन का 'बलचनमा' ग्राम्य जीवन के साकार रूप हैं। इसी प्रकार उदयशंकर भट्ट के सागर लहरें और मनुष्य रांगेय राघव के 'विषाद मठ' भैरव प्रसाद गुप्त के 'सती मैया का चोरा' में समसामयिक परिस्थितियों और संदर्भों का विश्लेषणात्मक अंकन किया गया। 'रांगेय राघव ने 'विशाद मठ' में बंगाल के अकाल से त्रस्त जनता की दयनीय अवस्था का चित्रण किया है। भगवती चरण वर्मा ने अपने वृहद् उपन्यास 'भूले बिसरे चित्र' में भारतीय समाज को व्यापक फलक पर समेट कर सामाजिक राजनीतिक सभी प्रकार के परिवर्तन को अंकित कर दिया है। इन सभी उपन्यासकारों ने प्रेमचंद की सामाजिक दृष्टि को पूर्ण विकास, नयी गति और नयी दिशाएँ दी है और सामाजिक यथार्थ का सर्वांगीण रूप प्रस्तुत किया है।' [8]

नागर जी ने भी इसी धारा को मानवतावादी आस्था के साथ पुष्ट किया है। उन्होंने ऐतिहासिक, पौराणिक, सांस्कृतिक उपन्यास भी लिखे हैं और भारतीय संस्कृति की समग्र व्याख्या भी प्रस्तुत की है। वृंदावन लाल वर्मा, यशपाल, रांगेय राघव, राहुल सांकृत्यायन, आचार्य चतुरसेन शास्त्री आदि ने भी ऐतिहासिक उपन्यासों का सृजन किया है। 'आगे आने वाले उपन्यासकारों में धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, नरेश मेहता, निर्मल वर्मा, देवराज, प्रभाकर माचवे, सुरेश सिन्हां आदि के नाम प्रमुख हैं। इन्होंने स्वतंत्रता के बाद भारत की बदली हुई मानसिकता, बौद्धिक विश्लेषणात्मकता, मनोमंथन कुंठाएँ, अन्तर्द्वन्द्व, भारतीय सांस्कृतिक धरातल पर पाश्चात्य संस्कृति, सभ्यता का प्रभाव स्त्री–पुरूषों सम्बन्धों की निर्द्वन्द्वता, पारिवारिक विघटन, सामाजिक प्रतिष्ठा आदि की नयी दृष्टि के अनुसार स्थापना की है।' [9]

संवेदना और शिल्पगत अनेकानेक प्रयोगों के साथ–साथ चिन्तन की व्याख्या उपन्यास के विकास और नूतन स्वरूप को प्रकट करती है। इन सर्जकों ने उपन्यासों में जिस जीवन दृष्टि और प्रायोगिक सम्बन्ध भूमिका को प्रस्तुत किया है, वह एक अहमियत रखती है। प्रत्येक उपन्यासकार की अपनी दृष्टि होती है। नागर जी की भी अपनी दृष्टि है।

अपनी प्रस्तुति है जो उनके उपन्यासों में मिलती है। ''नागर जी ने 'अमृत और विष' में हिन्दी उपन्यास के विकास की समस्त रूपरेखा लेखक अरविन्द शंकर के साहित्यिक चिन्तन के माध्यम से प्रस्तुत की है।'' [10] साथ ही इस विकास क्रम में होने वाले परिवर्तनों और भिन्न दृष्टिकोणों के सत्य को भी पूर्ण स्वस्थ दृष्टि द्वारा देखा है कालक्रम रूकता नहीं, नया पुराने की जगह जाता ही है। व्यक्ति ही नहीं विचार भी, व्यवहार और दर्शन भी बदलता है। फिर क्यों यह पीढ़ियों के संघर्ष की चिंता, किस युग की नई पीढ़ी से नहीं ? किस सत्य की आंधी में असत्यों की धूल–धक्कड़ उड़कर जमाने के लोगों तक नहीं पहुँची? पीढ़ियों के संघर्ष में अकेले बेचारे साहित्यिक ही को क्यों दोषी ठहराया जाये। समाज को देखना एक बात है और उसे देखकर प्रतिक्रिया व्यक्त करना बिल्कुल अलग स्थिति है किन्तु यह आम व्यक्ति की स्थितियाँ हैं। कलाकार का प्रस्थान बिन्दु तो इससे और भी आगे है वह देखकर क्रियात्मक होकर ही सृजन की भूमिका पर आ पाता है।

यही भूमिका उसे आधुनिक बोध से जोड़ देती है। फिर चाहे इतिहास का आधुनिकरण हो या पौराणिक संदर्भों का अभिनवीकरण हो या समकालीन यथार्थ का प्रतिबिम्बीकरण हो, सभी में लेखकीय प्रतिबन्धता आकार गढ़ती दिखाई देती है। नागर जी का औपन्यासिक सृजन जिस भूमिका पर हुआ है, वह चाहे ऐतिहासिक रही हो, चाहे पौराणिक और चाहे सामाजिक सभी में उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता और आधुनिक बोध सम्पदा के रंग गहरे होकर आये हैं। जिन्हें हम उनके ऐतिहासिक या पौराणिक उपन्यास कहते हैं, उनमें भी उसी मात्रा में युगीन चेतना और आधुनिक बोध है, जिस मात्रा में सामाजिक उपन्यासों में। सुविधा की दृष्टि से मैंने नागर जी के औपन्यासिक सृजन को दो शीर्षक दिये हैं – 'सामाजिक चेतना वलयित उपन्यास और विविध बोध से युक्त उपन्यास। सामाजिक उपन्यासों के अन्तर्गत 'महाकाल' 'सेठ बांकेमल', 'बूँद और समुद्र', 'अमृत और विष', 'सुहाग के नूपुर' उपन्यासों का समीक्षात्मक विश्लेषण और मूल्यांकन किया गया है। विविध बोध को प्रस्तुत करने वाले उपन्यास भी दो प्रकार के हैं – ऐतिहासिक और पौराणिक–सांस्कृतिक। ऐतिहासिक उपन्यासों के अंतर्गत – 'शतंरज के मोहरे', 'सात घूँघट वाला मुखड़ा' को लिया जा सकता है और पौराणिक–सांस्कृतिक उपन्यासों में 'एकदा नैमिषारण्ये' और 'मानस का हंस' को स्थान प्राप्त है।' [11]

उपन्यास साहित्य ''उपन्यास समाज के यथार्थ और मार्मिक चित्रण के लिए सर्वाधिक उपयुक्त, सशक्त और सफल विधा है। आधुनिक समाज के जटिल जीवन की प्रस्तुती उपन्यास के द्वारा संभव है, इसलिए उपन्यास को आधुनिक पूँजीवादी युग का महाकाव्य कहा गया है।'' [12] आधुनिक मशीनी सभ्यता के युग में उपन्यास साहित्य ही एक ऐसी विधा है, जो समूचे सामाजिक

जीवन को अभिव्यक्ति देने में सफल सिद्ध हुई है। सुप्रसिद्ध कथा आलोचक रैल्फ़ुाक्स ने उपन्यास को आधुनिक युग के महाकाव्य की संज्ञा दी है। ''उपन्यास का वास्तविक सम्बन्ध जीवन से हैं। वह महान् घटनाओं की खोज नहीं करता, उसका रचना क्षेत्र तो दैनिक जीवन की घटनाओं से हैं। प्रेमचन्द ने गाँव कस्बे की कहानियों को उपन्यास में उजागर किया है तो अमृतलाल नागर जी ने शहर में आम जनता तक पहुँचकर उनकी अंदरूनी बातों को एक नया रूप देकर उपन्यास के माध्यम से पाठक तक लाने का कठिन परिश्रम किया है। स्वाधीन भारत के वे ऐसे उपन्यासकार हैं, जिनकी रचनाओं में स्वाधीनता के पूर्व का समाज और आज के समाज का चित्रण प्रभूत मात्रा में मिलता है। नागर जी के उपन्यास में स्वतंत्रता पूर्व, स्वतंत्रता प्राप्ति के संघर्षकाल और समसामयिक समाज का चित्रण मिलता है। 'बूँद और समुन्द्र', 'नाच्यौ बहुत गोपाल' जैसे उपन्यासों में उनके परिश्रम का चित्रण मिलता है। कुल मिलाकर नागर जी के चौदह उपन्यास हैं उनमें ज्यादातर उपन्यास सामाजिक और ऐतिहासिक धरातल पर निर्मित है। जीवनीपरक उपन्यासों के साथ राजनीतिक आर्थिक, धार्मिक चित्रण को रोचकता के साथ दर्शाया गया है। 'एकदा नैमिषारण्ये' में दार्शनिकता का अंश दिखाई देता है। मुगलों और अंग्रेजों का राज काज का भी चित्रण उनके उपन्यासों में खुलकर मिलता है।

आप जिस स्थान पर महाशक्ति के रूप में अमेरिका खड़ा है, वही स्थान इंग्लैण्ड का था। आज के डालर की जगह पाउण्ड की थी। आलोचक एजाज अहमद के शब्दों में, "वास्तव में वैश्वीकरण का तस्व्वुर तब से शुरू होता है, जब से यूरोपीय तिजारती यूरोपीय पूंजी के तहत अमेरिका की खोज करते हैं। इस खोज से पहले आधी दुनिया भूमंडल (ग्लोब) का हिस्सा नहीं थी, लेकिन कोलम्बस की यात्रा के बाद से इसका सिलसिला शुरू हो जाता है। इस तरह से यूरोप की पूंजी और तिजारतियों ने भूमंडलीकरण की प्रक्रिया को जन्म दिया।" इनकी रचनाओं में विषय एवं विचार ही विस्तृत नहीं था, बल्कि भाषा का स्तर भी फैला हुआ एवं विस्तृत था। सिंह जी ने इस शोध में उच्च वर्ग, निम्न वर्ग की भाषा, शिक्षित एवं अनपढ़ की भाषा अधिकारियों की भाषा, उपभोक्तवादी वर्ग की भाषा का भेद बड़ी ही व्यापकता से लोगों को समझाने का प्रयास किया है।संसार की अन्य भाषाओं की तरह हिन्दी भाषा में भी पुरुष जाति को ही शेर मचा रहता है। भाषा भी स्त्री के समान भेदभाव की दृष्टि से देखी गई हैं। भाषा का भेदभाव साहित्य में स्पष्ट हो जाता हैं। यह शोध स्वातंत्र्योतर यथार्थवादी नाटकों की भाषा में लेंगिग भेदभाव को प्रकट करता है। हिन्दी भाषा में लिंग, संज्ञा सर्वनाम विशेषण से लेकर मुहावरों, लोकों मितयों आदि में भेदभाव देखा गया। उपभोक्तावाद भी हिन्दी भाषा के लेगिंग भेदभाव के लिए जिम्मेदार ठहरी है। भाषा के सृजन के साथ–साथ समाज के जनमानस की सोच भी सकारात्मक में परिवर्तन लाना भी आवश्यक हैं। जो व्यक्ति दलित वर्ग से जन्म होता हैं। उसे अधिकारियों या उच्च वर्ग के लोगों द्वारा रौंदा जाता है। उनका हर प्रकार से शोषण किया जाता हैं।

निष्कर्ष

सविधान में दलित वर्ग को अनुंसुचित जाति–जनजाति के नाम से रेखांकित किया गया आयों के प्राचीन ग्रंथ भावेद में 'दास' शब्द का प्रयोग हुआ इसे संस्कृत में 'दस्यु' कहा गया। ऋग्वेद के दशर्म मण्डल में शुद्रों की उत्पत्ति के बारे में बताया गया हैं कि शुद्रों की उत्पत्ति प्रजाप्रति के चरणों से हुई। आर्यो में दलित वर्ग को अछुत शुद्र का नाम दिया। इस वर्ग के लोगों को समाज ने अछुत वर्ग की घोषणा के अन्तर्गत अपना जीवन जीने के लिए बाध्य होना पड़ा।

नवाब अपनी जनसंख्या बढ़ाने के लिए किसी भी जाति की महिलाओं से अनवरत बलात्कार करते जाते हैं। विलासी नवाब के कारण सारे अवधवासी अपने–आपको आतंकित और आरक्षित महसूस करते हैं। अवध की नाइन, धोबिन, बनियों तथा अन्य अपेक्षित जाति की औरतें भी नवाब जादे को जन्म देकर खासकर अवैध जनसंख्या में अनवरत वृद्धिकर रही थी। इस प्रकार औरतें अपने अवैध नवाबजादे को अवध के उत्तराधिकारी बनाने में भी अनेक षड़यंत्र रचती हैं। नवाब, बन्दियों के साथ–साथ सामान्य, वजीर, अमीर–उमराव और बनियें, धोबी, नाई, नागरिक–ग्रामीण आदि जनजाति के पात्र इसमें हैं। नर्तकी माघवी के साथ आकृष्ट और समर्पित कोवलन की शादी कन्नगी के साथ हो जाती है। विवाह के बाद कन्नगी सब प्रकार से पति कोवलन की सेवा करती रहती है। लेकिन कोवलन के पति द्वारा पहनाए गए नूपुर उसे समर्पित नहीं कर पाती, क्योंकि कन्नगी उन्हें अपने सुहाग के नूपुर मानती है। उधर नर्तकी माधवी अभी भी कोवलन की पत्नी बनने के सपने देखती रहती है। इस प्रकार एक कुलवधु और नगरवधु में प्रत्यक्ष संघर्ष छिड़ जाता है। अंत में नगरवधू पागल हो जाती है। उधर कुलवधु के सती रू‍प को न समझने वाला कोवलन पतन के शर्त में गिरता जाता है। अंत में पत्नी के सहारे ही उसका उद्धार होता है। इसी के साथ ही कथा–वस्तु प्रायःसमाप्त हो जाता है। अंत में नागर जी अपने मन्तव्य को इस प्रकार अभिव्यंजित एवं प्रतिष्ठित करते हैं कि ''पुरुष को बल केवल सती ही दे सकती है।''[12]

संदर्भ ग्रंथ

1. डॉ. संध्या गौतम–अमृतलाल नागर के उपन्यासों में मानवाद (सूर्य भारती प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम सं. 2003 ई.) पृ0 11
2. डॉ. सत्यपाल चुघ–आस्था के प्रहरी, (इकाई प्रकाशन, इलाबाद, संस्करण1970 ई.) पृ0 86
3. डॉ. सत्यपाल चुघ –प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों की शिल्प विधि (लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद संस्करण 1968 ई.) पृ0 101
4. डॉ.सुदेश बत्रा–अमृतलाल नागर व्यक्तित्व, कृतित्व और सिद्धान्त, (पंचशील प्रकाश, जयपुर, संस्करण 1979 ई.) पृ0 102
5. डॉ. सुरेखा एम. झाडे–अमृतलाल नागर के जीवनी परक उपन्यास (अमन प्रकाषन, कानपुर, संस्करण 1996 ई.) पृ0 220
6. डॉ. सुरेश सिन्हा–हिन्दी उपन्यास उद्‌भव और विकास (अशोक प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1965 ई.) पृ0 56
7. डॉ.सुरेन्द्र नाथ तिवारी –प्रेमचन्द और शरतचन्द्र के उपन्यासः हिन्दी का बिम्ब पृ0 108
8. डॉ. सुषमा धवन–हिन्दी उपन्यास (राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1961 ई.) पृ0 116
9. डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी– हिन्दी साहित्य की भूमिका (हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर, बम्बई संस्करण 1954 ई) पृ0 211
10. डॉ. हेमराज कौशिक–अमृतलाल नागर के उपन्यासः नये मूल्यों की तलाश (प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1985 ई.) पृ0 34
11. पुष्पा बंसल–अमृतलाल नागरः भारतीय उपन्यासकार, (प्रेम प्रकाशन मन्दिर, दिल्ली संस्करण 1987 ई) पृ0 90
12. प्रकाश चन्द्र मिश्र–अमृतलाल नागर का उपन्यास साहित्य, (साहित्य प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1977 ई.) पृ0 102